INTERNATIONAL NEWS AND VIEW CORPORATION
INVC
अंतरराष्ट्रीय समाचार एवं विचार निगम

गांवों के सशक्तिकरण में युवाओं की भूमिका

By : INVC Team Published On : 30 Aug, 2016 12:05 AM IST

- अरुण तिवारी -

भारत में सड्क, दुकान, बिजली, प्राथमिक स्कूल, प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र और थानायुक्त गांवों की संख्या बढ़ रही है। गांवों में पक्के मकानों की संख्या बढ़ी है। मकानों में मशीनी सुविधाओं की संख्या बढ़ी है ; शौचालय बढ़े हैं। मोबाइल फोन, मोटरसाइकिल और ट्रेक्टर बढ़े हैं। ऊंची डिग्री व नौकरी करने वालों की संख्या बढ़ी है। प्रति व्यक्ति आय और क्रय शक्ति में भी बढ़ोत्तरी हुई है। मज़दूरी और दहेज की राशि बढ़ी है। ग्राम पंचायतों व ग्राम आधारित योजनाओं में शासन की ओर से धन का आवंटन बढ़ा है।

क्या बढ़ोत्तरी के उक्त ग्राफ को सामने रखकर हम कह सकते हैं कि भारत के गांव सशक्त हुए हैं ? यदि हम भारतीय गांवों को सिर्फ एक भौतिक इकाई माने, तो कह सकते हैं कि हां, पूर्व की तुलना में भारतीय गांव आज ज्यादा सशक्त हैं। भौतिक इकाई के तौर पर भी यदि हम भारतीय गांवों की मिट्टी, पानी, हवा, प्रकाश, वनस्पति, मवेशी और इंसानी शरीर की गुणवत्ता को आधार माने, तो कहना होगा कि पूर्व की तुलना में भारतीय गांव अशक्त हुए हैं। मैं ऐसा क्यों कह रहा हूं ? क्योंकि अधिक अस्पताल, अधिक स्कूल, अधिक दुकानें, अधिक पैसा और अधिक थाने क्रमश: ज्यादा अच्छी सेहत, अधिक ज्ञान, अधिक स्वावलंबन, अधिक समृद्धि और कम अपराध की निशानी नहीं है।

वर्ष 1947 की तुलना में आज कृषि उत्पादन निस्संदेह बढ़ा है,किन्तु वहीं तब के अनुपात में आज भारत में उतरते पानी वाले गांव, बीमार पानी वाले गांव, बंजर होते गांव, रोगियों की बढ़ती संख्या वाले गांव तथा ग्रामीण बेरोज़गारों की संख्या कई गुना बढ़ी है। गांव की रसोई में कांसा, पीतल और तांबे वाले अधिक मंहगे बर्तनों तथा जौ, चना, मक्का जैसे मंहगे अनाज, शुद्ध पुष्ट दूध तथा देसी घी की जगह आज क्रमश: सस्ते स्टील, सस्ते गेहूं, पानी मिले दूध तथा वनस्पति घी ने ले ली है। यह गांवों के सशक्त होने के लक्षण हैं या असशक्त होने के ?

सशक्तिकरण का असल मायने

भारत के गांव असल में भौतिक से ज्यादा, एक सांस्कृतिक इकाई ही हैं। इस दृष्टि से भी भारतीय गांव पूर्व की तुलना में अशक्त हुए हैं। इन्हे सशक्तिकरण की सख्त आवश्यकता है। सशक्तिकरण का मूल सिद्धांतानुसार, किसी भी संज्ञा या सर्वनाम के मूल गुणों को उभारकर शक्ति प्रदान करना ही उसका असल सशक्तिरण है। गांवों को शहर में तब्दील कर देना अथवा उसे शहरी सुविधाओं से भर देना, गांवों का असल सशक्तिकरण नहीं है। यदि गांवों का असल सशक्तिकरण और उसमें युवाओं की असल भूमिका को चिन्हित करना हो, तो हमं सबसे पहले भारतीय गांव नामक इकाई के मौलिक गुणों को चिन्हित करना होगा।

भारतीय गांव के मौलिक गुण

यह जगजाहिर फर्क है कि नगर का निर्माण सुविधाओं के लिए होता है और प्रत्येक गांव तब बसता है, जब आपसी रिश्ते वाले कुछ परिवार एक साथ रहना चाहते हैं। ये रिश्ते खून के भी हो सकते हैं और परंपरागत जजमानी अथवा सामुदायिक काम-काज के भी। लेन-देन में साझे का सातत्य और ईमानदारी किसी भी रिश्ते के बने रहने की बुनियादी शर्तें होती हैं। इस दृष्टि से एक गांव में रहने वाले सभी निवासियों के बीच रिश्ते की मौजूदगी पहला और एक ऐसा जरूरी मौलिक गुण है, जिसकी अनुपस्थिति वाली किसी भी भारतीय बसावट को गांव कहना अनुचित मानना चाहिए। साधन का सामुदायिक स्वावलंबन, आचार-विचार में सादगी तथा आबोहवा व खान-पान में शुद्धता को आप गांव के अन्य तीन आवश्यक मौलिक गुण मान सकते हैं। कृषि, मवेशी पालन व परंपरागत कारीगरी...तीन ऐसे आवश्यक पेशे हैं, जिन्हे भारतीय गांवों की आर्थिकी व संस्कृति की रीढ़ कह सकते हैं।

मौलिक गुणों की शक्ति

ये ही वे गुण हैं, जिनकी मौजूदगी के कारण कभी प्रख्यात यूरोपीय विद्वान ई.वी. हैवल ने भारत के गांवों को प्रजातंत्र की आधारशिला

बताया था। प्रसिद्ध पर्यटक ट्रैवनियर ने कहा था कि भारत में प्रत्येक गांव अपने आप में एक छोटा सा संसार है। बाहर की घटनाओं का उनके ग्राम्य जीवन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। गांव के निवासी अपने बल और भगवान पर विश्वास करके अपने कामों में जुटे रहते हैं। भारत के गांव एक बड़े परिवार के समान है, जिसका प्रत्येक सदस्य अपने कर्तव्यों से भली-भांति परिचित है। उनकी एकता और सहयोग की भावना प्रशंसनीय है।

इन्ही मौलिक गुणों की समृद्धि के परिणामस्वरूप, भारत कभी सोने की चिड़िया कहलाया। इन्ही मौलिक गुणों के आधार वा भारत के गांवों में कभी खेती को उत्तम, व्यापार को मध्यम और नौकरी को निकृष्ट कहा जाता था। खेती इतनी उन्नत थी कि कृषि उत्पादों को आयात करने की नौबत ही नहीं आती थी। कम्पयुटरीकृत तकनीक का प्रयोग करके भी हम आज अधिकतम 600 काउंट तक के महीन धागे बना पाते हैं। पूर्व में भारतीय गांवो की कारीगरी इतनी उन्नत थी कि ढाका के कारीगर 2500 काउंट तक के महीन धागे बना लिया करते थे। ढाका की मलमल दुनिया में मशहूर थी। भारत, सूत का नामी निर्यातक था। सामाजिक नियमन का तंत्र इतना मज़बूत था कि हमारी परम्परागत पंचायतों के पंचों के निर्णयों को परमेश्वर का निर्णय मानकर गांव स्वीकार करता था। खेती पूर्णतया जैविक थी। जो अपने पास है, उसी में जीवन चलाने को मज़बूरी की बजाय, वैचारिक मज़बूती की श्रेणी में रखा जाता था।

क्यों अशक्त हुए भारतीय गांव ?

इन गुणों की ताकत को समझते हुए ही खासकर अंग्रेजी हुकूमत ने 'फूट डालो, शासन करो' को अपनी रणनीतिक बुनियाद बनाया। मैकाले की शिक्षा नीति की बुनियाद पर ऐसा ही समाज बनाने की कोशिश की, जो अपने मौलिक गुणों से दूर हो। हिंदू-मुसलमां के बीच भेद बढ़ाने के लिए ब्रितानियों ने राजनैतिक चालें चलीं। नये वन कानूनों द्वारा वनों को सरकारी बनाकर गांवों के प्राकृतिक संपदा अधिकार छीनने की शुरुआत की। राजस्व वसूलने के लिहाज से नहर बनाने के क्रम ने स्वावलंबी भूजल प्रबंधन की भारत की पारम्परिक कुशलता को शिथिल किया। चंपारण के किसानों को नील की खेती पर मज़बूर करना, नमक कानून और कारीगरी में जबरदस्ती विदेशी यंत्रों को प्रवेश कराने की ब्रितानी कोशिशें भारत के ग्रामीण कौशल और स्वावलंबन को नष्ट करने की ही कोशिशें थीं। इन सब चालों को सफल करने के लिए अंग्रेजी हुकूमत कई प्रस्ताव लाई। भूमि व्यवस्था, ज़मीदारी प्रथा, 1860 का सोसाइटी रजिस्ट्रेशन एक्ट, 1870 लॉर्ड मेयो का प्रस्ताव, 1882 का लॉर्ड रिपन का प्रस्ताव और फिर 1907 शाही आयोग के प्रस्ताव ने मिलकर गांवों की स्वायत्ता नष्ट कर दी। स्थानीय स्वशासन के नाम पर नगरों को अधिकारियों का गुलाम बना दिया गया।

कई मायने में आज़ादी के बाद भी यह उपक्रम जारी रहा। आज आधुनिक जीवन शैली के आकर्षण, शासन-प्रशासन की अदूरदर्शिता और बाजार की आक्रामक रणनीति ने हमारे गांवों को उनके मौलिक गुणों से दूर करने का काम किया है। दुनिया बदलना युवा का काम है, किंतु ग्रामीण भारतीय युवा आज खुद बदलती दुनिया की चपेट में आता दिखाई दे रहा है।

ग्राम्य सशक्तिकरण की चुनौतियां

ग्रामीण सशक्तिकरण के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती यह है कि आज हमारे गांव, गांव बने रहने की बजाय, कुछ और हो जाने के इच्छुक दिखाई दे रहे हैं। कुछ लोग इसे ही सशक्तिकरण मान रहे हैं; जबकि ऐसे सशक्तिकरण के कारण भविष्य में भारत के गांव न गांव रह पायेंगे और न ही नगर हो पायेंगे। वे अधकचरे होकर रह जायेंगे।

यह चित्र कैसे उलटे ? गांव अपने मौलिक गुणों को पुनः कैसे हासिल करे ? यह अब युवा तन-मन के भरोसे ही संभव है। भारत के गांव प्रतीक्षा में हैं कि गांवों का यौवन पुनः बली हो। उसकी मुट्ठियां पुनः बंधें। युवा चेतना पुनः ग्रामीण समुदाय के सशक्तिकरण में लगे। किंतु यह तभी संभव है, जब ग्रामीण युवा यह समझने को तैयार हो कि उसके गांव ने जो कुछ खोया है, वह मौलिक गुणों के खो जाने का ही परिणाम है।

उसे समझना होगा कि रिश्ते की लगातार कमज़ोर पड़ती डोर के कारण साझे के जरूरी काम नहीं हो पा रहे। सामुदायिक भूमि, जल और अन्य प्राकृतिक संसाधनों का उचित प्रबंधन नहीं हो पा रहा। इसी कारण भारत में बेपानी व प्रदूषित पानी वाले गांवों की संख्या बढ़ रही है। इसी कारण साझे खेत व खेती लगातार घट रहे हैं। इसी कारण गांवों में आपसी झगड़े, अपराध और मुकदमे बढ़ रहे हैं। इसी कारण गांव की बेटी, अब पूरे गांव की बेटी नहीं रही। ग्रामीण युवा को समझना होगा कि जैसे ही गांव के साझे की डोर फिर से जुड़ेगी, वैसे ही ग्राम्य सशक्तिकरण के बंद दरवाले स्वतः खुलने लग जायेंगे। यह गारंटी है।

दुर्योगवश, ग्रामीण युवा ने अधिक पढ़ने का मतलब पलायन मान लिया है। इस नाते सबसे पहली जरूरत यही है कि युवा गांव में रुके ; तभी तो वह अपनी असल भूमिका निभा सकेगा। यह तभी संभव है कि जब वह समझे कि अधिक पढ़ाई, अच्छे हुनर और अच्छे भविष्य का मतलब सिर्फ पलायन नहीं होता। युवा विकास का पैमाना, सिर्फ शहरी हो जाना नहीं है। युवा विकास का असल मतलब है, अपने आसपास के परिवेश का विकसित करने में समर्थ व संकल्पित हो जाना। वह समझे कि गांवों का खाली होना और शहरों में भीड़ व भगदड़ का बढ़ना, एक असंतुलित भारत का चित्र है। यह किसी तेज लपट की ओर भागती एक ऐसी लता का चित्र है, जो अंततः लपट की चपेट में आकर अपने चित्त और जड़ से उखड़कर अपने अस्तित्व का नाश कर लेती है। क्या हम ऐसा भारत बनायें ?

सोच बदलने से बदलेगी दुनिया

आई.ए.एस की नौकरी छोड़ने वाले बंकर रॉय का तिलोनिया स्थित बेयरफुट कॉलेज, जलपुरुष राजेन्द्र सिंह के साथ-साथ अलवर का उत्थान चित्र, हिवरे बाज़ार के पोपटराव पवार की सरपंची की विख्यात दास्तान, भारत की पहली एम.बी.ए. डिग्रीधारी महिला संरपंच होने के नाते चर्चा में आई राजस्थान के ज़िला टोंक की छवि रजावत.... ऐसे जाने कितने उदाहरण हैं, जो बताते हैं कि गांव में रहकर भी बेहतर आय, बेहतर रोज़गार, बेहतर सम्मान और शहर से अधिक आनंदमयी जीवन संभव है। किंतु इसके लिए ग्रामीण युवा को सबसे पहले अपनी मानसिकता व प्राथमिकता बदलनी होगी। उसे शहर में नौकर बनने की बजाय, गांव में अपने काम का खुद मालिक बनने का सपना देखना होगा। निजी उत्थान को गांव के उत्थान से जोड़ना होगा। शिक्षा, कृषि, बागवानी, मवेशी, और कारीगरी आधारित उद्यम की राह यह सपना पूरा कर सकती है।

संभावनाओं का खुला आकाश

शिक्षा : उसे यह भी समझना होगा कि सिर्फ डिग्री और नौकरी के लिए पढ़ने-पढ़ाने से गांवों को सशक्तिकरण असंभव है। ग्रामीण युवाओं को ऐसे ज्ञान की चाहत को प्राथमिकता बनाना होगा, जो उन्हे खेतीबाड़ी, मवेशी और स्थानीय संसाधन आधारित कारीगरी तथा विपणन का सर्वश्रेष्ठ व स्वावलंबी नमूना प्रस्तुत करने में सक्षम बनाये। ऐसा कुशल ग्राम अर्थशास्त्री बनना होगा ताकि गांव को आर्थिक उत्थान के लिए नगर की ओर ताकना न पड़े।

गांवों में प्राइवेट उच्चतर माध्यमिक स्कूलों व स्नातकोत्तर कॉलेजों की बाढ़ गई है। सामुदायिक व सहकारी आधार पर संचालित कृषि, मवेशी, जल, भूमि, आयुष, पारंपरिक कौशल उन्नयन तथा समग्र ग्राम प्रबंधन सिखाने वाली अच्छी तकनीकी व प्रबंधन पाठशालाओं का भारतीय गांवों में अभी भी अभाव है। बस, कुछ थोड़े से संजीदा युवा साथी एक बार यह तय कर लें, तो वे यह कर सकते हैं। कुश्ती, दौड़, निशानेबाजी, तैराकी जैसे ग्राम अनुकूल खेलों की नर्सरी बनाकर भी हमारे ग्रामीण युवा 'ग्रामोदय से भारतोदय' की सक्षमता हासिल कर सकते हैं। ग्रामीण युवा को ऐसे ग्राम समाज का निर्माण करना होगा, जहां हम भिन्न जाति, संप्रदाय, वर्ग होते हुए भी पहले एक गांव हों। बंधुआ व बाल मज़दूरी के दागों को पूरी तरह मिटाना होगा।

पंचायत : उसे ग्रामसभा की ऐसी उत्प्रेरक शक्ति बनना पड़ेगा, जो खुद सक्रिय हो और पंचायतीराज संस्थान की त्रिस्तरीय इकाइयों को सतत् सक्रिय, कर्मठ तथा ईमानदार बनाये रखने में सक्षम हो। 'ग्राम विकास योजना' की धनराशि गांव-गांव पहुंचने लगी है। प्रत्येक ग्रामीण युवा चाहे, तो ग्रामसभा सदस्य की हैसियत से उचित ग्राम योजना निर्माण, मंजूरी तथा क्रियान्वयन में एक नायक की भूमिका निभाकर अपना युवा होना सार्थक कर सकता है।

आयुष : भारत सरकार के आयुष मंत्रालय ने भारत की पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियों को पुनः प्रतिष्ठित व प्रसारित करने का काम शुरु किया है। गांवों को आज इसकी बहुत जरूरत है। गांववासियों की गाढ़ी मेहनत कमाई का बहुत बड़ा हिस्सा पढ़ाई, दवाई, नशाखोरी और मुकदमेबाजी में जा रहा है। नशा, ग्राम सशक्तिकरण की राह का बड़ा रोड़ा है। इस नाते नशामुक्ति बड़ी जरूरत का काम है। दूसरी ओर गांव अपने इलाज के लिए झोलाछाप स्थानीय डॉक्टरों के चंगुल में फंसकर अपना पैसा व सेहत..दोनो नष्ट कर रहे हैं। औपचारिक-अनौपचारिक अध्ययन तथा अपने बुजुर्गों से स्थानीय वनस्पति व जीवन शैली आधारित परंपरागत चिकित्सा पद्धतियों के ज्ञान व व्यवहार को पुनः हासिल करना गांव को सशक्त करने का ही काम है। इसके जरिए गांवों में अचूक देसी नुस्खों की पूरी आयुवेर्दिक फार्मेसी खड़ी करना संभव है। जड़ी-बूटी कूटते-कूटते फार्मेसी की प्राथमिक पाठशाला का ज्ञान संभव है। पुरातन वैद्यक पद्धति का पुनर्जीवन संभव है। सबसे अधिक तो गांव की धन रक्षा के साथ-साथ स्वास्थ्य स्वालंबन का सशक्तिकरण संभव है। सहयोग की दृष्टि से मानव संसाधन मंत्रालय को कुछ नियम संबंधी बाधायें हटानी होंगी और कुछ कोष खोलने होंगे। आयुष मंत्रालय को ऐसी फार्मेसियों के नियमन, निगरानी और प्रोत्साहन का ईमानदार तंत्र विकसित करना होगा।

कृषि : यह सिर्फ दुर्योग ही है कि बहकावे में आकर ग्रामीण युवा ने भी खेती को निकृष्ट मान लिया है। उसे स्व्यं से प्रश्न करना होगा कि भारतीय खेती और खेतिहर की आज दुर्दशा क्यों है ? उसे मंथन करना होगा कि यदि खेती सचमुच घाटे का सौदा है, तो फिर कई कंपनियां खेती के काम में क्यों उतर रही हैं ? कमी हमारी खेती में है या विपणन व्यवस्था में ? ऊंची पसंद वाले देसी, जैविक और हर्बल को अन्य से उत्तम समझ रहे हैं। बाजार भी इन्हे उत्तम बताकर मंहगे दाम पर बेच रहा है। पतंजलि उत्पादों का बढ़ता ग्राफ प्रमाण है कि ग्राहकों की दुनिया देशी बीज, योग और आयुर्वेदिक पर जान छिड़क रही है। समाधान यहां है।

इस चित्र को सामने रखकर ग्रामीण युवा को समझना व समझाना होगा कि उसका 'देशी' आज भी सर्वश्रेष्ठ है। अपने गंवई ज्ञान पर अविश्वास के कारण गांव ने उसे खोया है। अधिक उत्पादन के लालच में हमने गांवों के खेत व मिट्टी रासायनिक उर्वरकों व खतरनाक कीटनाशकों की चपेट में ला दिया है। इसी कारण भारत में बंजर भूमि के आंकड़े बहुत तेजी से बढ़ रहे हैं। भूजल स्तर गिरने, खरपतवारों के बढ़ने, उर्वरक व बाजारू बीज खरीदने की मज़बूरी तथा कृषि में बढ़ते यंत्रों के उपयोग ने खेती की लागत बढ़ाई है। खेती को व साल-दर-साल संरक्षित किए जा सकने वाले देशी बीज, जैविक खाद, बागवानी मिश्रित खेती, बेहतर मवेशी, बेहतर भू व भू-जल प्रबंधन, सिंचाई व खेती के अनुकूल वैज्ञानिक तरीके तथा प्रसंस्करण व विपणन सुविधाओं को अपनाकर गांव चाहें, तो खेती को फिर से लाभ का सौदा बना सकते हैं। मदद के लिए ग्राम हाट, खाद्य प्रसंस्करण, जैविक भारत, जलग्राम योजना, ग्राम विकास योजना,

हरियाली, कृषि विस्तार योजनायें, सिंचाई योजनायें, भूमि सुधार कार्यक्रम, सांसद आदर्श ग्राम योजना, भू अभिलेखों का डिजीटलीकरण, महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार योजना... अलग-अलग मंत्रालयों कि ऐसी जाने कितनी योजनायें व कार्यक्रम हैं। भारत सरकार ने कृषि विज्ञान डिग्रीधारियों को कृषि उत्थान योजनाओं का विशेष लाभ देना तय किया है। ग्रामीण युवा चाहें, तो इन योजनाओं का लाभ उठाकर गांव की खेती, मिट्टी और पानी की तसवीर बदल सकते हैं।

ग्रामोद्योग : इंटरनेट, अब उत्पाद को ग्राहक तथा जनता को प्रशासन से सीधे जोड़ने का एक कारगर औजार है। सरकार और बाज़ार अब ऑनलाइन है। 1800 करोड़ की ग्रामीण भारत डिजीटल साक्षरता मुहिम का सही इस्तेमाल किया जाये, तो यह प्रशासनिक भ्रष्टाचार मुक्ति के साथ-साथ ग्रामीण उत्पादों के विपणन का दलालविहीन तंत्र विकसित करने में मददगार हो सकती है। पढ़े-लिखे ग्रामीण युवा की भूमिका यह है कि वह इन ऐसी योजनाओं, कार्यक्रमों तथा अनुकूल वैज्ञानिक प्रणालियों के सही-गलत का चुनाव करने में गांव की मदद करे। जो अनुकूल हो, उसे गांव की पहुंच में लाने का वाहक बने।

बनारस की साड़ी, भदोही का कालीन उद्योग, मऊ के तांत उद्योग, इलाहाबाद के अमरूद, फैजाबादी बंडा, प्रतापगढ़ का आंवला, महोबा के पान, लखनऊ की चिकनकारी, रेवड़ी, बरेली का बेंत, कन्नौज का इत्र, हाथरस की हींग, हापुड़ की पॉट्री, संडीला के लड्डू, मथुरा के पेड़े, आगरा का पेठा, अलीगढ़ का ताला, रामपुर का चाकू, हापुड़ के पापड़, बागपत के खरबूजे..... एक ही प्रदेश में निगाह डालिए, तो कितने ही उत्पाद इलाकाई ब्रांड की तरह आज भी प्रतिष्ठित हैं। देश ही नहीं, दुनिया के बाज़ार मे इनकी इसी स्थानीयता के साथ मांग है। कश्मीर की पश्मीना, हिमाचली टोपी, पानीपत का पचरंगा अचार, जयपुरी जूतियां, मूर्ति उद्योग, दक्षिण की सिल्क, असम का हथकरघा, मिथिला की चित्रकारी और मुजफ्फरपुर की लीची सरीखे जाने कितने इलाकाई उत्पाद हैं, जिनकी प्रतिष्ठा आज भी डिगी नहीं है। इन सभी की प्रतिष्ठा की असल वजह आज भी गांव की कारीगरी और स्थान विशेष की मिट्टी, पानी व आबोहवा ही है। इन्हे सशक्त कर, गांव अपनी आय भी बढ़ा सकता है और रोज़गार के मौके भी। कौशल विकास, खादी-ग्रामोद्योग आयोग, सहकारी तंत्र, लघु उद्योगों को 10 लाख के ऋण हेतु प्रधानमंत्री मुद्रा योजना समेत कई योजनायें/व्यवस्थायें ग्रामोद्योग आधारित सशक्तिकरण में मददगार हो सकती हैं। कृषि व ग्रामोद्योग आधारित सशक्तिकरण, गांव को गांव के मौलिक गुणों से दूर नहीं करता। यह पलायन रोकने की चाबी भी है और आय व आत्मसम्मान हासिल करने का खुला आसमान भी।

स्वच्छता : गांवों ने शहरी खान-पान, रहन-सहन व पॉलीपैक उत्पाद तो अपना लिए, लेकिन शहर जैसा स्वच्छता तंत्र गांव के पास नहीं है ; लिहाजा, भारतीय गांव, अब गंदगी और बीमारी के नये अड्डे बनने की दिशा में अग्रसर हैं। काली-पीली पन्नियां, बजबजाती नालियां और अन्य गंदगी के ढेर नई पहचान बनते जा रहे हैं। भारतीय गांवों की यह नई पहचान, किसी भी गांव के सशक्तिकरण के प्रतिकूल है। प्रतिकूलता के इन निशानों को मिटाना भी गांव का सशक्तिकरण ही है।

सशक्तिकरण का मैदान कुछ और भी हो सकता है, लेकिन एक बात तय है कि ऐसे ही कदमों से भारतीय गांवों की दुनिया बेहतर होगी ; ग्रामीण युवाओं की तक़दीर भी। ग्रामीण युवा चाहे, तो वह इसका संकल्प कर सकता है। वह खुद ही इस आवश्यक बदलाव का वाहक व नायक बन सकता है ; क्योंकि युवा होता ही वही है, जो लीक से अलग चले और दुनिया बदले।

परिचय -:

अरुण तिवारी

लेखक ,वरिष्ट पत्रकार व् सामजिक कार्यकर्ता

1989 में बतौर प्रशिक्षु पत्रकार दिल्ली प्रेस प्रकाशन में नौकरी के बाद चौथी दुनिया साप्ताहिक, दैनिक जागरण-दिल्ली, समय सूत्रधार पाक्षिक में क्रमश: उपसंपादक, वरिष्ठ उपसंपादक कार्य। जनसत्ता, दैनिक जागरण, हिंदुस्तान, अमर उजाला, नई दुनिया, सहारा समय, चौथी दुनिया, समय सूत्रधार, कुरुक्षेत्र और माया के अतिरिक्त कई सामाजिक पत्रिकाओं में रिपोर्ट लेख, फीचर आदि प्रकाशित।

1986 से आकाशवाणी, दिल्ली के युववाणी कार्यक्रम से स्वतंत्र लेखन व पत्रकारिता की शुरुआत। नाटक कलाकार के रूप में मान्य। 1988 से 1995 तक आकाशवाणी के विदेश प्रसारण प्रभाग, विविध भारती एवं राष्ट्रीय प्रसारण सेवा से बतौर हिंदी उद्घोषक एवं प्रस्तोता जुड़ाव। इस दौरान मनभावन, महफिल, इधर-उधर, विविधा, इस सप्ताह,

भारतवाणी, भारत दर्शन तथा कई अन्य महत्वपूर्ण ओ बी व फीचर कार्यक्रमों की प्रस्तुति। श्रोता अनुसंधान एकांश हेतु रिकार्डिंग पर आधारित सर्वेक्षण। कालांतर में राष्ट्रीय वार्ता, सामयिकी, उद्योग पत्रिका के अलावा निजी निर्माता द्वारा निर्मित अग्निलहरी जैसे महत्वपूर्ण कार्यक्रमों के जरिए समय-समय पर आकाशवाणी से जुड़ाव।

1991 से 1992 दूरदर्शन, दिल्ली के समाचार प्रसारण प्रभाग में अस्थायी तौर संपादकीय सहायक कार्य। कई महत्वपूर्ण वृतचित्रों हेतु शोध एवं आलेख। 1993 से निजी निर्माताओं व चैनलों हेतु 500 से अधिक कार्यक्रमों में निर्माण/ निर्देशन/ शोध/ आलेख/ संवाद/ रिपोर्टिंग अथवा स्वर। परशेप्शन, यूथ पल्स, एचिवर्स, एक दुनी दो, जन गण मन, यह हुई न बात, स्वयंसिद्धा, परिवर्तन, एक कहानी पत्ता बोले तथा झूठा सच जैसे कई श्रृंखलाबद्ध कार्यक्रम। साक्षरता, महिला सबलता, ग्रामीण विकास, पानी, पर्यावरण, बागवानी, आदिवासी संस्कृति एवं विकास विषय आधारित फिल्मों के अलावा कई राजनैतिक अभियानों हेतु सघन लेखन। 1998 से मीडियामैन सर्विसेज नामक निजी प्रोडक्शन हाउस की स्थापना कर विविध कार्य।

संपर्क -: ग्राम- पूरे सीताराम तिवारी, पो. महमदपुर, अमेठी, जिला- सी एस एम नगर, उत्तर प्रदेश , डाक पता: 146, सुंदर ब्लॉक, शकरपुर, दिल्ली- 92 Email:- amethiarun@gmail.com . फोन संपर्क: 09868793799/7376199844

****

Disclaimer : The views expressed by the author in this feature are entirely his own and do not necessarily reflect the views of INVC NEWS.

URL : https://www.internationalnewsandviews.com/role-of-youth-in-the-villages/

INTERNATIONAL NEWS AND VIEW CORPORATION
INVC
अंतरराष्ट्रीय समाचार एवं विचार निगम

12th year of news and views excellency

Committed to truth and impartiality

Copyright © 2009 - 2019 International News and Views Corporation. All rights reserved.